# ब्रिटिश शासन काल में संयुक्त पंजाब की सामाजिक व राजनीतिक स्थिति

**डॉ० जोगिन्द्र सिंह**
प्रवक्ता, राजनीति विज्ञान
राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय
समरगोपालपुर, जिला रोहतक

ब्रिटिश शासन काल से पूर्व सम्पूर्ण राज्य ग्रामों में बंटा हुआ था और ''ग्राम'' नामक ईकाई अपने आपमें पूर्ण रूप से आत्मनिर्भर थी। अंग्रेजी शासनकाल से पूर्व यातायात के साधन नाम मात्र के थे, इसलिए ग्रामीणों का दूसरे क्षेत्रों में आवागमन नहीं होता था। लोग मुख्य रूप से कृषि करते थे। इसके साथ–साथ कुछ लोग बढ़ई कारीगर भी थे, जो किसानों को कृषि कार्य में सहयोग देते थे। इस प्रकार गांव में सभी अपने–अपने कार्य करते व एक–दूसरे पर निर्भर थे। गांव के जीवन ढांचे का वर्णन करते हुए चौधरी छोटूराम ने लिखा –

''गाँव में हमेशा कुछ कारीगर होते हैं जो कृषि के औजारों को बनाते व ठीक करते हैं। कुछ छोटे वर्ग भी हैं जैसे नाई, सफाई कर्मचारी, चमार जो किसान को किसी न किसी रूप में सहयोग देते हैं। सामान्यतः उन्हें उनके द्वारा किए गए कार्यो की कीमत दी जाती है। गाँव में महाजन व पण्डित भी मिल जाते हैं जिनकी आवश्यकता जन्म, मृत्यु, शादी व त्यौहार इत्यादि अवसरों पर पड़ती है। इनके बदले इन्हें उपहार स्वरूप अनाज या फसल का कुछ हिस्सा दे दिया जाता है।''[1]

सभी प्रकार के संगठनों में कार्यो के बंटवारे से जाति प्रथा आरम्भ हो जाती है। भारतीय समाज में भी यह मुख्य आकर्षण है और इसे भारतीय समाज की आधारशिला भी कहा जाता है। यद्यपि पंजाब में जातिप्रथा भारत के दूसरे भागों से कम थी। जनगणना रिर्पोटो से सिद्ध होता है कि पंजाब में जातिप्रथा भारत के दूसरे भागों से अधिक कमजोर थी। जातिप्रथा हिन्दू समाज में अनेक वर्गो के रूप में व्याप्त थी। रियासत की प्रमुख जातियाँ – जाट, राजपूत, अहीर, सैनी, कम्बोज, पठान, खोखर, बल्लोच, बनिया, खत्री, अरोड़ा, ब्राह्म, सैयद, चमार, भंगी आदि।[2] इनमें सांख्यिकी रूप से शक्तिशाली जातियाँ जाट, राजपूत, ब्राह्मण, चमार, आर्यन और भंगी थी। सबसे अधिक भूमिवाला वर्ग जाट था जिनकी संख्या 50 लाख थी। गांवों में व्यापारी वर्ग, भूमिधारियों से निम्न स्तर के समझे जाते थे जबकि शहरों में उन्हें उच्च स्थान प्राप्त थ। व्यापारी वर्ग में सबसे महत्त्वपूर्ण पूर्व–दक्षिण में बनिये (452000), मध्य व उत्तर– पश्चिम में खत्री (436000),

दक्षिण–पश्चिम में अरोड़ा (653000) थे। ये सभी हिन्दू या कहीं–कहीं सिख थे। मुस्लिम वर्ग के व्यापारी मुख्यतः सिखावास (321000) और खोजावास (99000) में थे।[3]

जातिप्रथा के नकारात्मक प्रभाव के बावजूद इसका एक सकारात्मक प्रभाव भी देखने को मिलता है। यह लोगों को संगठित करती है और अनुशासन व व्यवहार पर सकारात्मक प्रभाव डालती है। जातिप्रथा की बुराईयों की आलोचना करते हुए महात्मा गाँधी जी ने कहा, ''मैंने जाति को समर्थन दिया क्योंकि यह आत्मसंयम थी परन्तु वर्तमान में इसका मतलब परिमित्तता है। वर्तमान जातिप्रथा में स्तुति के लिए कुछ भी नहीं हैं।''

पश्चिमी सभ्यता के विपरित भारत में संयुक्त परिवार प्रणाली है जोकि व्यक्ति को परिवार में संगठित करती है। भारत में कुलपति प्रणाली है जिसमें परिवार का सबसे वृद्ध एवं योग्य पुरुष सभी मुख्य कार्यो का निर्णय करेगा एवं अन्य सदस्य उसका पालन करेंगें और सम्पत्ति का सारा लेखा–जोखा कुलपति के पास होगा। इससे, हमें अनुशासन, कार्यपालन, सहनशीलता, स्नेह, दया, बलिदान व आर्थिक संगठन की शिक्षा प्राप्त होती है यद्यपि संयुक्त परिवार प्रणाली में भी कुछ कमियां है। आपस में झगड़े होते हैं जिससे परिवार की खुशी नष्ट हो जाती है। इस प्रणाली में व्यक्ति अपनी योग्यता का पूर्ण योगदान नहीं दे पाता। चौ० छोटूराम के समग्र चिन्तन को उस समय की समकालीन परिस्थितियों ने गम्भीर रूप से प्रभावित किया। अंग्रेजी शासन में ध्वस्त हुए सामाजिक ढांचे की ईकाईयों में 'पंचायत' महत्त्वपूर्ण ईकाई थी जिसका स्थानीय विषयों के कार्यो में महत्त्वपूर्ण योगदान था। सन् 1939 ई० में ग्राम पंचायत अधिनियम 1921 को संशाधित कर पंचायतों को प्रशासकीय, कार्यकारी व न्यायिक शक्तियां प्रदान की गई।[4]

## पंजाब में मुख्यतः

हिन्दू, मुस्लिम और सिख तीन धार्मिक समुदाय थे। जिनकी संख्या निम्न सारणी में है।

**सारणी 1**

**पंजाब में धार्मिक समुदायों की जनसंख्या**[5]

| वर्ष | मुस्लिम | हिन्दू | सिख |
|---|---|---|---|
| 1891 | 12915645 | 10237700 | 1870481 |
| 1901 | 14141122 | 10478721 | 2130987 |
| 1911 | 12275477 | 8773621 | 2883729 |
| 1921 | 12955341 | 8779257 | 3110060 |
| 1931 | 13332460 | 8125202 | 4538220 |

स्त्रोत : सैन्सस ऑफ इण्डिया, पंजाब, रिलिवन्ट ईयर

सारणी से स्पष्ट है कि रियासत में मुसलमान समुदाय बहुसंख्यक था। मुसलमान मुख्यतः गुरदासपुर, सियालकोट, गुजरेवाला, गुजरात, शेखपुरा, शाहपुरा, झेलम, रावलपिण्डी, अटोक, मिन्टगुमरी, लायलपुर, मुजफ्फरगढ़, मुल्तान, लाहौर और डेराखाजी खान जिलों में थे। मुसलमान बहुसंख्यक होने के साथ–साथ आर्थिक रूप से सुदृढ़ भी थे। वे गुजरात, झंग, झेलम व अटोक जिलों की 95 प्रतिशत भूमि पर अधिकार रखते थे।[6]

दूसरा बड़ा धार्मिक समुदाय हिन्दू रियासत के दक्षिणी क्षेत्रों में फैला हुआ था। हिन्दू हिसार, गुड़गांव, रोहतक, करनाल, शिमला और कांगड़ा जिलों में बहुसंख्यक थे जबकि अम्बाला और होशियारपुर में दूसरे समुदायों से अधिक संख्या में थे। दक्षिण जिलों में इनकी जनसंख्या 20 प्रतिशत से भी कम थी।[7] तीसरा बड़ा समुदाय सिख मुख्यतः जालंधर, लायलपुर और मुलतान मण्डल के मिन्टगुमरी जिलों में रहता था। यद्यपि लुधियाना जिले को छोड़कर सिख सभी जगह अल्पमत थे।[8] क्रिश्चियन मुख्यतः भारत सरकार की ग्रीष्मकालीन राजधानी शिमला में रहते थे।[9] 1931 ई० की जनगणना के अनुसार पंजाब की कुल जनसंख्या का 54.40 प्रतिशत, मुसलमान, 30.18 प्रतिशत, हिन्दू और 14.30 प्रतिशत सिख थे।[10]

पंजाब रियासत के अधिग्रहण के समय बहुत ही कम सरकारी विद्यालय थे और अधिकतर क्षेत्रों में शिक्षा धार्मिक संस्थाओं द्वारा प्रदान की जाती थी। स्कूलों का संचालन मदरसों, गुरुद्वारों व मन्दिरों द्वारा किया जाता था जिनमें धार्मिक शिक्षा दी जाती थी।[11] धार्मिक संस्थाओं में दी जाने वाली शिक्षा लैंगिक थी। लड़कियों को शिक्षा नहीं दी जाती थी। अंग्रेजी सरकार स्वयं के स्कूल आरम्भ करने की इच्छुक थी न कि

धार्मिक स्कूलों को बढ़ाने की। दूसरी तरफ अंग्रेजी सरकार ने धार्मिक स्कूलों की शिक्षा को सरकारी नौकरियों में मान्यता नहीं दी, जिसके कारण धार्मिक संस्थाओं का पतन होना आरम्भ हो गया था। सन् 1849 ई० में पहला सरकारी स्कूल लाहौर में खोला गया और सन् 1886 ई में ग्रामीण क्षेत्रों में जमींदारी स्कूलों को खोलने का विचार किया गया, जिनमें केवल 50 प्रतिशत उपस्थिति ही पर्याप्त थी व फसल कटाई के समय जमींदारी स्कूलों को बंद कर दिया जाता था। यद्यपि यह प्रयोग सफल नहीं हो सका और सन् 1908 ई० में इन स्कूलों को ग्रामीण स्कूलों में बदल दिया गया। 1918–19 में पंजाब में 6123 प्राईमरी स्कूलों में 289690 विद्यार्थी थे जो 1923–24 में बढ़कर 7685 स्कूलों में 401877 विद्यार्थी हो गए।[12]

अंग्रेजी सरकार रियासत में आम जनता के लिए शिक्षा के प्रयास नगण्य किए। वास्तव में वे पंजाब के लोगों को शिक्षित नहीं करना चाहते थे और अपने हितों को ध्यान में रखते हुए लोगों में राजनीतिक जागरूकता भी नहीं आने दी। अंग्रेजी सरकार सिर्फ उन्हें किसान, मजदूर और सैनिक ही रखना चाहती थी। इस तरह अंग्रेजी सरकार के हित पंजाब के लोगों के लिएनुकसानदायक थे।[13]

शिक्षण संस्थाओं की कमी होने के कारण छोटूराम को स्वयं भी शिक्षा ग्रहण करने में अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा। उन्होंने अपनी प्राइमरी और मिडिल शिक्षा क्रमशः ग्राम सांपला और झज्जर में ग्रहण की। यद्यपि शिक्षा ग्रहण करने में कोई ज्यादा मुश्किल हाई स्कूल की पढ़ाई में आई क्योंकि उच्च शिक्षण संस्थान अल्पमात्रा में थे। सम्पूर्ण रोहतक जिले में महाविद्यालय तो दूर कोई उच्च विद्यालय भी नहीं था। उच्च शिक्षा ग्रहण करने के लिए विद्यार्थियों का लाहौर या दिल्ली जाना पड़ता था। 20वीं शतादी में पंजाब रियासत के दक्षिणी भाग में शिक्षा की व्यवस्था दयनीय थी। छोटूराम इस तथ्य से पूर्णतः परिचित थे कि किसानों को शिक्षित किए बिना उनके कष्टों का निवारण नहीं हो सकता। उनका विश्वास था कि ग्रामीण जनता का कर्ज ग्रस्त होने का मुख्यतः कारण निरक्षरता था। किसान अज्ञानता से पूंजीपतियों के चंगुल में फंस जाते थे और सूदखोर ऊँची दर पर ब्याज के साथ–साथ अन्य तरीकों से भी किसानों का शोषण करते थे। गरीब किसान अज्ञानतावश अपने मूलभूत अधिकारों जैसे पीने का पानी, सड़क और स्वास्थ्य आदि सेवाओं से भी वंचित थे।[14] उनका विश्वास था कि देश एक दिन अवश्य आजाद होगा और ग्रामीण जनता शिक्षा के अभाव में शहरी लोगों से पीछे रह जाएगी। इसलिए शिक्षा को बढ़ा देने पर बल दिया। छोटूराम के अनुसार साक्षरता के बिना किसान न तो लोकतन्त्र को भोग सकेंगे और न ही एक आजाद राष्ट्र के नागरिकों की तरह अपने कर्त्तव्यों का पालन कर सकेंगे।

सन् 1870 ई० में लाहौर में 'पंजाब विश्वविद्यालय' की स्थापना की। सन् 1882 ई० में श्री डोनाल्ड मैकलोण्ड ने इसे पूर्ण विश्वविद्यालय का दर्जा दे दिया जो बाद में पंजाब विश्वविद्यालय के नाम से प्रसिद्ध हुआ।[15] इससे पहले पंजाब में महाविद्यालय व विश्वविद्यालय, कलकत्ता विश्वविद्यालय से सम्बन्धित थे। पंजाब

विश्वविद्यालय की स्थापना के बाद शिक्षा का तेजी से विकास हुआ और 1883–84 ई० में विश्वविद्यालय से केवल तीन कला महाविद्यालय सम्बन्धित थे। सरकारी महाविद्यालय एवं ओरिएंटल महाविद्यालय लाहौर में व सैंट स्टीफन महाविद्यालय (दिल्ली) सन् 1884–90 ई० में यह संख्या 7 व सन् 1901 ई० में यह संख्या 12 हो गई थी।[16]

सन् 1870 ई० में लाहौर में विधि विद्यालय की स्थापना की गई जो 1882 ई० पंजाब विश्वविद्यालय में सम्मलित कर दिया गया और 1909 ई० में इसे पूर्ण महाविद्यालय का दर्जा दे दिया गया।[17] 20वीं शताब्दी के आरम्भ में रियासत में केवल दो चिकित्सक महाविद्यालय एक लाहौर व दूसरा लुधियाना में था। सन् 1909 ई० कृषि शिक्षा के लिए लायलपुर में पहला पंजाब कृषि महाविद्यालय खोला गया और सन् 1922 ई० में लाहौर में पहले इंजीनियरिंग महाविद्यालय की स्थापना की गई जिसमें इलैक्ट्रिकल व मकैनिकल कोर्स भी थे।[18]

पंजाब रियासत के व्यापक क्षेत्रों को देखते हुए शिक्षण संस्थाओं की संख्या बहुत ही कम थी व जनसंख्या के छोटे भाग को ही शिक्षा प्रदान की जा सकती थी। सन् 1921 ई० में 97.3 प्रतिशत व सन् 1931 ई० में 94 प्रतिशत जनसंख्या निरक्षर थी। पुरुषों के अनुपात में स्त्रियों की साक्षरता दर बहुत ही कम थी जिससे समाज का सामाजिक–आर्थिक और राजनीतिक ढ़ांचा पूर्णतया प्रभावित था। सन् 1931–32 ई० में केवल 3 और 1935 ई० में 6 लड़कियों ने एम०ए० की परीक्षा पास की।[19]

20वीं शताब्दी के मध्य स्त्रियों को निम्न समझा जाता था और उनका सम्मान पुरुषों की अपेक्षा बहुत कम था। परिवार में लड़की के जन्म को दुर्भाग्यपूर्ण समझा जाता था व लड़की को पिता 2500 रूपये बोझ के रूप में देखता था।[20] इसके विपरीत लड़के के जन्म के समय थालियां बजाई जाती और परिवार के सभी सदस्य खुशीयाँ मनाते। ग्रामीण स्त्रियों की स्थिति के बारे में छोटूराम ने लिखा है कि ग्रामीण स्त्रियों की स्थिति सुधारनी अत्यन्त आवश्यक है। स्त्रियाँ अधिकतर गृह कार्य करती हैं और खेतों में पुरुषों के साथ कृषि का कार्य करती है फिर भी उन्हें हीनभावना से देखा जाता है।

स्त्रियों को अपने पिता के घर पिता का, शादी होने पर पति का व बुजुर्ग होने पर अपने पुत्र का आदेश मानना होता था। स्त्रियों से आशा की जाती थी कि वह पति व अन्य परिवार के बुर्जुगों के खाना परोसने के बाद ही खाना ग्रहण करेंगी। स्त्री पति के साथ–साथ न चलकर पीछे–पीछे समान दूरी पर चलती थी। यहां तक कि वे अपने पति को नाम से नहीं पुकार सकती थी। इस समय शादी के साथ–साथ लड़कियों को भी बेचा जाता था। डार्लिंग के अनुसार, ''शादी में स्त्रियों को पशुओं की तरह बदला जाता था व मध्य पंजाब में 70 प्रतिशत शादियां स्त्रियों को खरीदने से होती थी।''[21]

तत्कालीन समय में बाल विवाह का अत्याधिक प्रचलन था। अनेक व्यक्ति बाल विवाह को आदरपूर्वक देखते थे। सन् 1911 ई० में 1000 स्त्रियों के विवाह में 392 बच्ची 10–15 वर्ष की आयु के बीच की थी।[22]

पर्दाप्रथा से भी स्त्रियों की स्थिति अधिक खराब हुई। औरतों को पर्दे से अपना चेहरा ढ़क कर रखना पड़ता था। मुसलमान स्त्रियों को घर से बाहर जाते हुए 'बुर्का' नामक वस्त्र से अपना चेहरा ढ़कना पड़ता था। यही से स्थानातंरित होकर यह प्रथा हिन्दुओं में भी आ गई।[23] पर्दाप्रथा स्त्रियों के सामाजिक–राजनीतिक एवं शारीरिक विकास में मुख्य बाधा है।

उस समय विधवा–विवाह पर प्रतिबन्ध था। शास्त्रों के अनुसार विधवा विवाह नहीं कर सकती थी। विधवा विवाह पर प्रतिबन्ध वैदिक समय और मनुकाल में भी था परन्तु कुछ परिस्थितियों जैसे मृत पति के भाई या मृत पति के पारिवारिक खून के रिश्ते से उस परिवार के सदस्य से विधवा की शादी कर दी जाती थी। विधवा को आभूषणों एवं अच्छे वस्त्रों से वंचित रखा जाता और अनेक सुअवसरों पर उसे घर में दासी के रूप में रखा जाता था जो कि किसी को अपराध किए बिना सजा देने जैसा था। किसी भी विवाह समारोह व सामाजिक कार्यक्रमों में विधवा की उपस्थिति लगभग वर्जित थी।[24]

पंजाब में लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि था और रियासत की 60 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर थी। लोगों का खाद्य सामग्री के साथ कृषि व्यवसाय से फैक्ट्रियों के लिए कच्चा माल भी प्राप्त होता था।[25] पंजाब की जलवायु अधिक गर्मी व अधिक सर्दी युक्त थी, यहाँ की भूमि उपजाऊ थी जिसकी पांच नदियां सतलुज, व्यास, रावी, चिनाब व झेलम द्वारा सिंचाई की जाती थी।[26] उपजाऊ और सिंचाई की सुविधा होने के बावजूद भी रियासत में कृषि के क्षेत्र में सन्तोषजनक प्रगति नहीं की। कभी वर्षा का न्यूनतम होना, कभी वर्षा की अधिकता से फसल नष्ट हो जाती थी। फसल को जंगली पशुओं, चूहों, कीटों, टिड्डीयों आदि प्राकृतिक विपदाओं से भी नुकसान होता रहता था। ये विपदाएं प्राकृतिक और अनियन्त्रित थी।

दूसरा कृषि के पिछड़ेपन एवं कृषकों की गरीबी का मुख्य कारण जोतों का छोटा होना था। हैनरी किलवर्ट ने सबसे पहले सन् 1925 ई० से सन् 1928 ई० तक इसका अध्ययन किया। जिसने निम्न सारणी में प्रति किसान भूमि की उपलब्धता को दर्शाया।

## तालिका 2

## कृषि भूमि का विवरण तथा कृषकों की संख्या[27]

| भूमि जोंतों का आकार | भूस्वामी | | क्षेत्र | |
|---|---|---|---|---|
| | संख्या | प्रतिशत | अनुमानित कृषि योग्य एकड़ | कृषि योग्य भूमि प्रतिशत में |
| 1 एकड़ से कम | 625400 | 17.9 | 313000 | 1.0 |
| 1 से 3 एकड़ | 908400 | 25.5 | 1268000 | 4.4 |
| 3 से 5 एकड़ | 520000 | 14.9 | 1935000 | 6.6 |
| 5 से 10 एकड़ | 630600 | 18.0 | 4400000 | 15.1 |
| 10 से 15 एकड़ | 288300 | 8.2 | 3353000 | 11.5 |
| 15 से 20 एकड़ | 150100 | 4.3 | 2444000 | 8.4 |
| 20 से 25 एकड़ | 94000 | 2.7 | 1967000 | 6.8 |
| 25 से 50 एकड़ | 1687000 | 4.8 | 5887000 | 20.4 |
| 50 एकड़ से ज्यादा | 120900 | 3.3 | 7452000 | 25.7 |

स्त्रोत : हैनरी किलवर्ट, द वैल्थ एण्ड वैल्फेयर ऑफ द पंजाब, द सिविल एण्ड मिल्ट्री गजट लिमिटेड, लाहौर इसी प्रकार के आंकड़े 1939, पंजाब बोर्ड ऑफ इकोनोमी द्वारा दिए गए।

इस तालिका से ज्ञात होता है कि 5 एकड़ से कम भूमि 58.3 प्रतिशत कृषकों के पास थी और 15 एकड़ से कम भूमि 84.5 प्रतिशत कृषकों के पास थी। जबकि 15 एकड़ से ज्यादा भूमि सिर्फ 14.1 प्रतिशत कृषकों के पास थी। ये आंकड़े जोत के छोटा होने से स्पष्ट दर्शाते हैं।

यदि सरकार द्वारा भूमि जोतों का समान आकार कर दिया जाता तो न तो किसी एक के पास इतनी बड़ी जोते होती कि वह उनको जोत ही न सके और न ही एक के पास इतनी छोटी जोत होती कि उसको पूर्ण परिश्रम करने के लिए अवसर ही नहीं मिल पाता हो।

औपनिवेशिक सरकार की शोषणकारी नीति और महाजनों व सूदखोरों द्वारा कृषकों का शोषण भी इसके कारण थे। कृषि और आर्थिक दशा कमजोर होने के लिए सिर्फ सरकार ही नहीं बल्कि इसके साथ–साथ सूदखोर और साहूकार भी उत्तरदायी थे। सरकार द्वारा अधिकाधिक लगान लिया जाता था। दूसरे धन्धों या व्यवसायों में अधिक आमदनी वाले को ऊँची दर पर कर देना पड़ता था और कम आमदनी वाले को कम दर पर कर देना पड़ता था। परन्तु किसानों से समान रूप से कर लिया जाता था। उदाहरणतः जो

5000 एकड़ का मालिक था उसको भी 2 रूपये प्रति एकड़ और जो सिर्फ 5 एकड़ का मालिक था उसे भी 2 रूपये प्रति एकड़ माल देना पड़ता था।[28]

पटवारियों के कारण भी किसानों को मुसीबतें होती थी। उदाहरणतः 1934 ई० में खरीफ की फसल के समय गवर्नर ने घोषणा की कि बाढ़ग्रस्त रोहतक, करनाल, गुड़गाँव और हिसार जिलों में भूराजस्व की दर 50 प्रतिशत वसूल की जाए। इस पर पटवारियों ने रिश्वत देने वालों का ही भूराजस्व 50 प्रतिशत वसूल किया।[29]

सरकार के साथ–साथ सूदखोर, साहूकार भी काफी हद तक किसानों के शोषण के लिए उत्तरदायी थे। सूदखोर अपने मुनाफे के लिए कृषकों को ऊँची दर पर ऋण देकर गलत और ठीक दोनों तरीके ही अपनाते थे। एक बार किसान यदि सूदखोर के पंजों में फंस जाता तो उसके पुत्रों तक का निकलना मुश्किल होता था। सूदखोर द्वारा उस पर दास की तरह व्यवहार किया जाता सिर्फ जीवित इसलिए रखा जाता कि वह साहूकार के लिए ''सोने का अण्डा'' देने वाली मुर्गी के समान होता था।

तत्कालीन समय में पंजाब की भारत के अन्य भागों की अपेक्षा व्यापार की प्रतिशतता कम मात्रा में थी क्योंकि उस समय रियासत द्वारा निर्यात के लिए अधिक कृषि उत्पादन नहीं था। सिख शासक विशेषकर रणजीत सिंह अंग्रेज व्यापारियों को रियासत से बाहर निकालना चाहते थे।[30]

पंजाब (उत्तर–पश्चिमी भारत) अपने अतीतकाल से उपजाऊ क्षेत्र होने के कारण, विदेशी आक्रमणकारियों के लिए राजनीतिक दृष्टि से आकर्षक क्षेत्र रहा है। उत्तर–पश्चिम से आने वाले आक्रमणकारियों के साथ भी अधिकतर युद्ध इसी क्षेत्र में हुए थे। इसी प्रदेश की भूमि पर कुरुक्षेत्र में 'महाभारत' का युद्ध हुआ और 'गीता' का उपदेश भी यही पर दिया गया जो कि भारतीय इतिहास में कर्त्तव्य–बोध का जीता– जागता उदाहरण है।

ब्रिटिश शासन काल में सतही तौर पर सब कुछ व्यवस्थित नजर आता था परन्तु सतह के नीचे सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों में जबरदस्त हलचल थी। यहाँ मुख्यतः तीन जातियां (धर्म) हिन्दू, मुस्लिम सिख का वर्चस्व माना जाता था, इन तीनों में राजनीतिक सत्ता प्राप्ति के लिए संघर्ष होते रहते थे। इन्हीं संघर्षों का फायदा उठाकर सम्पूर्ण भारत के साथ–साथ ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने पंजाब पर अधिकार कर लिया और सन् 1858 ई० में अंग्रेजी सरकार ने कम्पनी का शासन अपने अधीन ले लिया। पंजाब की तीनों जातियां हिन्दू, मुस्लिम, सिख अपने वर्चस्व की स्थिरता के लिए अंग्रेजी शासनतन्त्र को यह दिखाने का प्रयास करती थी कि पंजाब के शासन में उनका सहयोग ही समस्याओं के लिए अचूक औषधि है। 'फूट डालो और राज करो' मूलमन्त्र के पुजारी के लिए पंजाब की स्थिति सदा ही 'बन्दर बांट' की नीति के कारण अनुकूल रही।

ये तीनों जातियाँ राजनैतिक होड़ में एक दूसरे से आगे निकलने की ताक में रहती थी। पंजाब में देहातों की तुलना में शहरों में हिन्दू–सिख और मुसलमान अल्पसंख्या में थे, परन्तु राजनैतिक सुविधा की दृष्टि से वे बड़े सजग थे और प्रायः सभी सुविधाएं अपने आप में समेट लेते थे। पंजाब के देहाती लोग सभी सुख सुविधाओं से वंचित थे। इन देहातों में हिन्दुओं के साथ ओर भी ज्यादा अन्याय हुआ करता था। ये सभी प्रकार से राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक उपेक्षा के शिकार थे।

पंचायती संस्थाओं को अंग्रेजी शासन द्वारा निरस्त किया जा चुका था। उस समय देहात की दृष्टि से डिस्ट्रीक बोर्ड ही स्थानीय राजनीति का केन्द्र था। इनमें प्रायः जेलदार, सफेदपोश और रायसाहब लोग ही चुनाव में खड़े होते थे। ये सभी अंग्रेजी सरकार के मुखबिर या पिछलग्गु होते थे, जो अंग्रेजी सरकार की जी–हजुरिया करते थे। ग्रामीण जनता अनपढ़ और भोली होने के कारण राजनीतिक दृष्टि से उदासीन थी।

अंग्रेजी सरकार द्वारा हिन्दुओं के साथ सरकारी नौकरियों में सौतेला व्यवहार किया जाता था। इसमें मुख्यतः ग्रामीण हिन्दू थे। उन्हें सरकारी नौकरियों में समुचित एवं न्यायपूर्ण भाग नहीं मिलता था। यह बात कौंसिल के आंकड़ों से सिद्ध होती है। पंजाब विधानसभा सदस्य ने 11 मार्च 1927 ई० में कौंसिल में प्रश्न उठाते हुए कहा कि सरकारी वकीलों की नियुक्तियों में असमानता का व्यवहार हो रहा है। हमारे प्रान्त में 28 सरकारी वकीलों के पद हैं। इनमें 15 पर हिन्दू, 10 पर मुसलमान, 2 पर सिख और 1 पर ईसाई लगे हुए हैं। खोज करने पर पता चला कि 15 हिन्दुओं में से एक भी जमींदार हिन्दू नहीं हैं। मुसलमानों में से कितने जमींदार हैं, यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। दोनों सिख भी गैर–जमींदार ही हैं। मेरा अनुमान है कि मुसलमानों में 4 से अधिक जमींदार नहीं हो सकते। इस प्रकार 28 में से 4 ही जमींदार हैं, जबकि पंजाब में जमींदारों की संख्या 80 प्रतिशत है और ये ही लोग राजस्व में अधिकतम रूपया देते है।[31] इस प्रकार का असमानुपात सभी विभागों में था। सभी प्रकार की भौतिक सुख–सुविधाओं से शहरी लोग सम्पन्न थे। ग्रामीण जनता सिर्फ कर भार की सहन करती थी।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि अज्ञानता एवं अशिक्षा के कारण भारतीय समाज में अनेक सामाजिक कुरीतियां व्यापत थी।

# सन्दर्भ सूची

[1] एम०एल० डार्लिंग, द पंजाब पिजैन्ट इन प्रोसपरिटी एण्ड डिबेट, कोस्मो पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1928, पृ० 242
[2] इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया, प्रोविंशियल सीरिज, पंजाब, वॉल्यूम–1, कलकत्ता, 1908, पृ० 48–49
[3] इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया, प्रोविंशियल सीरिज, पंजाब, वॉल्यूम–1, कलकत्ता, 1908, पृ० 49
[4] पंजाब विधान सभा बहस, वॉल्यूम –XII, 5/3/1940, पृ० 135
[5] सैन्सस ऑफ इण्डिया, पंजाब, 1891, पृ० 93; 1901, पृ० 169; 1911, पृ० 97; 1921, पृ० 34–42; 1931, पृ० 317
[6] सैन्सस ऑफ इण्डिया, पंजाब, 1931, वॉल्यूम–XVI, पार्ट–1, पृ० 289
[7] वही, पृ० 300
[8] वही, पृ० 289
[9] बी०एस० सैनी, द सौशल एण्ड इकोनोमिक्स हिस्ट्री ऑफ द पंजाब, 1901–39, पूर्वोक्त, पृ० 23
[10] सैन्सस ऑफ इण्डिया, पंजाब 1931, वॉल्यूम–XVI, पार्ट–1, पृ० 287–302
[11] श्यामला भाटिया, सोशल चेन्ज एण्ड पॉलिटिक्स : इन पंजाब 1898–1910, इनका पब्लिर्स प्राईवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1987, पृ० 46
[12] एनुवल रिर्पोट ऑन द प्रोग्रेस ऑफ एजुकेशन इन द पंजाब, 1924–25, पृ० 4
[13] अजीत जावेद, लैफ्ट पॉलिटिक्स इन पंजाब 1935–47, दुर्गा पब्लिर्स, दिल्ली, 1988, पृ० 23–25
[14] एम०एल० डार्लिंग, द पंजाब पिजैन्ट इन प्रोसपरिटी एण्ड डिबेट, कोस्मो पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1928, पृ० 47
[15] इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया, वॉल्यूम–XX, 1908, पृ० 366
[16] पंजाब एजुकेशन रिर्पोट, 1901–02, पृ० 3
[17] वही, पृ० 158–160
[18] पंजाब विधान परिषद् बहस, वॉल्यूम –XXVII, 6/3/1936, पृ० 259
[19] जी०एस० छाबरा, सोशल एण्ड इकोनोमीक हिस्ट्री ऑफ द पंजाब 1949–1901, एम० नाजीन एण्ड कम्पनी, दिल्ली, 1962, पृ० 85–87
[20] एम०एल० डार्लिंग, द पंजाब पिजैन्ट इन प्रोसपरिटी एण्ड डिबेट, कोस्मो पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1928, पृ० 348
[21] सैन्सस ऑफ इण्डिया पंजाब, 1911, वॉल्यूम–XIV, पृ० 85
[22] बी०एस० सैनी, द सौशल एण्ड इकोनोमिक्स हिस्ट्री ऑफ द पंजाब, 1901–39, पृ० 124–26
[23] जी०एस० छाबरा, सोशल एण्ड इकोनोमीक हिस्ट्री ऑफ द पंजाब 1849–1901, पूर्वोक्त, पृ० 95
[24] हैनरी किलवर्ट, द वैल्थ एण्ड वैल्फेयर ऑफ द पंजाब, द सिविल एण्ड मिल्ट्री गजट लिमिटेड, लौहार, 1936, पृ० 4
[25] एम०एल० डार्लिंग, द पंजाब पिजैन्ट इन प्रोसपरिटी एण्ड डिबेट, कोस्मो पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1928, पृ० 12
[26] वही, पृ० 12
[27] हैनरी किलवर्ट, द वैल्थ एण्ड वैल्फेयर ऑफ द पंजाब, द सिविल एण्ड मिल्ट्री गजट लिमिटेड, लौहार, 1936, पृ० 172
[28] वही, पृ० 173
[29] एम०एल० डार्लिंग, द पंजाब पिजैन्ट इन प्रोसपरिटी एण्ड डिबेट, कोस्मो पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1928, पृ० 237
[30] इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया, प्रोविंशियल सीरीज पंजाब, वॉल्यूम–1, कलकत्ता, 1908, पृ० 85
[31] बी०एस० सैनी, द सौशल एण्ड इकोनोमिक्स हिस्ट्री ऑफ द पंजाब, 1901–39, पूर्वोक्त, पृ० 196